सामाजिक शत्रुता की लपटों में झुलसती दुनिया

संजय कुंदन

दुनिया भर में सामाजिक शत्रुता बढ़ती ही जा रही है। विभिन्न धार्मिक समुदायों में आपसी विद्वेष और टकराव तेज़ हुआ है, जो अकसर हिंसक रूप ले रहा है। विडंबना तो यह है कि सरकारें इन्हें कम करने की बजाय और बढ़ावा ही दे रही हैं। उन्होंने अपने यहां कुछ धार्मिक समुदायों ख़ासकर अल्पसंख्यक समुदायों पर प्रतिबंध लगाया है, उनके साथ भेदभाव किया है, उनका प्रत्यक्ष या परोक्ष तौर पर उत्पीड़न किया है। अमेरिकी शोध और अध्ययन संस्थान प्यू रिसर्च सेंटर पिछले क़रीब दो दशकों से भी ज्यादा समय से लगातार इन स्थितियों का अध्ययन-विश्लेषण कर रहा है। उसके निष्कर्ष चिंता में डालते हैं।

बीते वर्ष जारी उसके चौदहवें वार्षिक सर्वेक्षण में कहा गया है कि विश्व में धार्मिक स्वतंत्रता में लगातार कमी आई है। यही नहीं धार्मिक टकराव के कारण तनाव और हिंसा में निरंतर बढ़ोतरी हुई है। धार्मिक प्रतिबंध भी बढ़ा है। प्यू रिसर्च सेंटर ने अपने इस अध्ययन के लिए एक सामाजिक शत्रुता सूचकांक (सोशल होस्टलिटिज इंडेक्स- एसएचआई) तय कर रखा है, जो किसी देश में सामाजिक टकराहट की स्थिति को दर्शाता है। इसमें उच्च स्कोर धर्म से संबंधित उत्पीड़न, भीड़ की हिंसा, आतंकवाद, उग्रवादी गतिविधियों और धर्मांतरण या धार्मिक प्रतीकों व पोशाक को लेकर संघर्ष के स्तर को दर्शाता है। इसी के साथ एक सरकारी प्रतिबंध सूचकांक (गवर्नमेंट रिस्ट्रिक्शंस इंडेक्स- जीआर) भी है, जो उन कानूनों, नीतियों और कार्यों को मापता है, जो धार्मिक मान्यताओं और प्रथाओं को नियंत्रित या सीमित करते हैं। इनमें विशेष मान्यताओं या प्रथाओं पर प्रतिबंध लगाने वाली नीतियां, कुछ धार्मिक समूहों को असमान रूप से लाभ देना और धार्मिक समूहों को लाभ प्राप्त करने के लिए पंजीकरण कराने वाले नौकरशाही नियम भी शामिल हैं।

इन दोनों सूचकांकों के उतार-चढ़ाव के आधार पर प्यू रिसर्च सेंटर का सामान्य निष्कर्ष यह है कि सरकारी प्रतिबंध लगातार बढ़ रहे हैं, जो 2021 में एक नई ऊंचाई पर पहुंच गए। उस वर्ष के इसके निष्कर्षों में से एक यह था कि 183 देशों (विश्लेषण किए गए देशों में से 92%) में सरकारों ने धार्मिक समूहों को परेशान किया, जबकि 2020 में 178 देशों में ही ऐसा देखा गया था। यह प्यू द्वारा धार्मिक सर्वेक्षण शुरू करने के बाद से सबसे बड़ी संख्या है। इस प्रकार का प्रतिबंध प्यू द्वारा विश्लेषित सभी पांच क्षेत्रों में व्यापक था। उदाहरण के लिए, मध्य पूर्व-उत्तरी अफ्रीका क्षेत्र के 20 देशों में से प्रत्येक में सरकारी उत्पीड़न का कम से कम एक मामला सामने आया। यूरोप के 45 देशों में से 43 (96%), अमेरिका के 35 देशों में से 33 (94%), उप-सहारा अफ्रीका के 48 देशों में से 44 (92%) और एशिया-प्रशांत क्षेत्र के 50 देशों में से 43 (86%) में भी यही हाल था। जहां तक सामाजिक शत्रुता का सवाल है तो 43 देशों (सभी अध्ययन में से 22%) में सामाजिक शत्रुता का स्तर 'उच्च' या 'बहुत उच्च' था, जबकि 2020 में 40 देशों (20%) में ऐसा था। प्यू के अनुसार 160 देशों में ईसाई सबसे अधिक उत्पीड़ित समूह थे, उसके बाद 141 देशों में मुसलमान थे। सभी बड़े धार्मिक समूहों को कहीं न कहीं परेशान किया जाता है और 14 वर्षों में यह स्तर काफ़ी बढ़ गया है, कई मामलों में लगभग दोगुना हो गया है। हमारे लिए फ़िक्र की बात यह है कि भारत दोनों तरह के सूचकांकों के आधार पर काफ़ी ऊपर है। 2021 और 2022 में एसएचआई पर 10 में से भारत का स्कोर 9.3 था। जीआरआई स्कोर 10 में से 6.4 था। साफ़ है कि हमारे देश में सामाजिक शत्रुता और सरकार द्वारा प्रतिबंध, दोनों ही काफ़ी ज्यादा है।

भूमंडलीकरण-उदारीकरण की घोषणा के साथ इसके पैरोकारों ने कथित विश्व ग्राम की बड़ी सुहावनी तस्वीरें खींचकर बताया था कि अब सारी समस्याओं का हल होने ही वाला है। उनका कहना था कि उदारीकरण से दुनिया में एक नई

शुरुआत होगी। ग़रीबी, बेरोज़गारी, भुखमरी जैसी समस्याओं का ख़ात्मा होगा और एक खुशहाल-शांतिपूर्ण विश्व समाज बनेगा। पर हुआ क्या है ? एक तरफ़ विश्व की एक बड़ी आबादी भारी ग़रीबी और तंगहाली से गुज़र रही है, तो दूसरी तरफ़ समाज में धर्म के आधार पर ज़बर्दस्त टकराव है, भेदभाव है, हिंसा है, जिसने लोगों का जीना दूभर कर रखा है। आधुनिक और प्रगतिशील दृष्टिकोण को गहरा धक्का लगा है। अब कट्टरपंथी सरकारों का बोलबाला है, जिनके लिए लोकतंत्र और मानवाधिकारों का कोई मूल्य नहीं है।

नवउदारवाद ने जो लंबे-चौड़े वादे किए, आज उनकी हवा निकलती जा रही है। विश्व अर्थव्यवस्था में गतिरोध पैदा हो गया है। ऐसे में, वित्तीय पूंजी और कॉरपोरेट ने मेहनतकश जनता को दबाकर रखने के लिए कठोर उपायों की ज़रूरत महसूस की। और इन क़दमों पर पर्दा डालने के लिए धार्मिक समुदायों के बीच झगड़े पैदा किए गए। बहुसंख्यक समुदाय के लिए एक काल्पनिक अतीत खड़ा कर उनके बीच 'गौरव' की भावना पैदा की गई। सामाजिक जीवन के केंद्र में धर्म को स्थापित किया गया और धार्मिक गोलबंदी के लिए एक काल्पनिक शत्रु भी खड़ा किया गया। एक बड़े वर्ग को पूरी तरह उसी शत्रु से लड़ने में लगा दिया गया है। इससे रोजमर्रा के तमाम प्रश्न गौण हो गए हैं।

अब सरकारें अपने को धर्म, संप्रदाय या नस्ल विशेष के संरक्षक के रूप में पेश करने लगी हैं। वे बहुसंख्यक वर्ग को खुश करने और उनका समर्थन हासिल करने के लिए अल्पसंख्यकों को निशाना बना रही हैं। इसका एक तरीक़ा है उनकी धार्मिक स्वतंत्रता-स्वायत्तता को नियंत्रित करना। उनके धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप करना, उन्हें समाज में अलग-थलग करना। यह काम सरकारें कई बार सीधे-सीधे कर रही हैं, लेकिन ज्यादातर वे अल्पसंख्यकों के विरुद्ध सक्रिय संगठनों को बढ़ावा देकर ऐसा कर रही हैं। ऐसे संगठनों की कार्रवाइयों को रोकने की बजाय उन्हें परोक्ष समर्थन दिया जा रहा है और उनके अतिवादी कृत्यों से आंखें मूंद ली जा रही हैं। सरकार समर्थक मीडिया इन कार्रवाइयों का औचित्य सिद्ध करने में लगा है। कई बार न्यायपालिका भी इन्हें लेकर उदासीन रहती है, क्योंकि न्याय तंत्र को भी सरकारों ने अपने अनुकूल बनाया है।

बढ़ती धार्मिक कट्टरता और सामाजिक तनाव का आर्थिक विकास पर गहरा असर पड़ता है। कई देशों की अर्थव्यवस्था, वहां जारी तनाव और हिंसा की वजह से खस्ताहाल होती जा रही है। किसी देश में जब किसी समूह के प्रति शक का माहौल बनाकर उसे आर्थिक गतिविधियों से बाहर कर दिया जाता है तो बाक़ी बचे समुदायों पर दबाव बढ़ जाता है और अलग-थलग किया गया समूह आश्रित जनसंख्या का हिस्सा बन जाता है। अब बचा हुआ तबक़ा चाहे जितना काम कर ले वह पूरी जनसंख्या के सम्मिलित योगदान की बराबरी नहीं कर सकता। ऐसे में अर्थव्यवस्था का कमज़ोर होना तय है। जबकि सामाजिक समरसता हमेशा ही आर्थिक खुशहाली लाती है। यह इतिहाससिद्ध है। इसके लिए अकसर जर्मनी की मिसाल दी जाती है। 19वीं सदी के जर्मनी में कुछ शहरों पर किए गए एक अध्ययन में पता चला कि जिन शहरों में धार्मिक विविधता और सहिष्णुता सबसे ज्यादा थी, वहां नई खोजें और उनके पेटेंट सबसे ज्यादा हुए।

विश्व बैंक के पूर्व मुख्य अर्थशास्त्री कौशिक बसु ने साल 2018 में अपने एक लेख में बताया था कि बांग्लादेश की अर्थव्यवस्था के तेज़ी से हुए विकास के लिए कौन-कौन से कारण ज़िम्मेदार हैं और उसकी अर्थव्यवस्था को आने वाले समय में किन चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है। ब्रुकिंग्स इंस्टीटयूट की वेबसाइट पर प्रकाशित इस लेख में बसु ने कहा था कि बांग्लादेश में कई धार्मिक कट्टरपंथी समूह और रूढ़िवादी समूह हैं जो प्रगतिशील सामाजिक सुधारों की दिशा में बांग्लादेश सरकार के क़दमों की आलोचना करते हैं। अगर आने वाले समय में ऐसे क़दम वापस लिए जाते हैं तो बांग्लादेशी अर्थव्यवस्था को गंभीर और दीर्घकालिक असफलताओं का सामना करना पड़ सकता है। उनकी आशंका आज सच होती दिख रही है।

इसी लेख में कौशिक बसु ने कहा था कि इतिहास में उभरती हुई अर्थव्यवस्थाएं कई बार कट्टरता की वजह से पटरी से उतरी हैं। लगभग हज़ार साल पहले अरब ख़लीफ़ा का शासन ऐसे क्षेत्रों पर था जो कि आर्थिक गतिशीलता के गढ़ माने जाते थे। दमिश्क और बग़दाद जैसे शहर संस्कृति, शोध और अन्वेषण के वैश्विक गढ़ हुआ करते थे। इस स्वर्णिम काल का अंत कट्टरवाद की जड़ें फैलने के साथ हुआ। इसी तरह पंद्रहवीं से सोलहवीं शताब्दी में पुर्तगाल का स्वर्णिम काल जल्द ख़त्म हो गया, क्योंकि ईसाई धर्मांधता पुर्तगाली साम्राज्य की प्रमुख राजनीतिक शक्ति बन गयी थी। ग़ौरतलब है कि औपनिवेशिक काल में विभिन्न औपनिवेशिक ताक़तों ने अपने उपनिवेशों में किसी भी तरह के विरोध को दबाने के लिए योजनाबद्ध तरीक़े से धार्मिक कट्टरता को बढ़ावा दिया और कई स्तरों पर सामाजिक संघर्ष पैदा किए, जिसका ख़मियाजा दुनिया आज भी भुगत रही है।

बसु ने इसी लेख में भारत को लेकर भी चिंता व्यक्त की है। उन्होंने लिखा कि भारत में आज के कई कट्टरवादी हिंदू संगठन अल्पसंख्यकों और महिलाओं के साथ भेदभाव करते हैं। ये वैज्ञानिक शोध और उच्च शिक्षा को नुक़सान पहुंचा रहे हैं और भारत की प्रगति में एक बाधक की भूमिका निभा रहे हैं। आज दुनिया भर में मज़दूरों की शक्ति भी कमज़ोर हुई है। वर्गीय चेतना की राजनीति का आधार घटा है। वामपंथी पार्टियों की ताक़त कम हुई है। वे सिकुड़ रही हैं। ऐसे में धार्मिक कट्टरता को बढ़ावा मिला है। मेहनतकश जनता की एकजुटता से ही इस हालात का सामना किया जा सकता है।

(कवर चित्र: 'परस्पर निर्भरता', कैरन हेडॉक)